कुनाल मजूमदार

बनाम

राजस्थान राज्य

12 सितम्बर, 2012

न्यायमूर्ति (डा.) बी. एस. चौहान और न्यायमूर्ति फकीर मोहम्मद इब्राहिम कलीफुल्ला

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 और 302 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 366(1)] – बलात्संग और हत्या – मृतका छोटी आयु की घरेलू नौकरानी की अभियुक्त-अपीलार्थी उसके मालिक द्वारा बलात्संग करने के उपरांत गला घोंटकर हत्या करना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को मृत्यु दंड दिया गया जो उच्च न्यायालय में अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा अपील किए जाने पर आजीवन कारावास में परिवर्तित किया गया – मृत्यु दंड की पुष्टि के लिए किए गए निर्देश पर उच्च न्यायालय द्वारा सही रीति में निपटारा नहीं किया गया – उच्च न्यायालय का दंडादेश लघुकृत करने के निर्णय को अपास्त करते हुए तीन माह के भीतर, मृत्यु दंड पुष्टि निर्देश और अपीलों का निपटारा करने के लिए उच्च न्यायालय को निर्देश दिया गया ।

प्रस्तुत मामले में, एकमात्र अभियुक्त द्वारा फाइल की गई यह अपील राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अधीन दांडिक हत्या निर्देश और इसके साथ 2007 की दांडिक अपील सं. 1 और इसी भांति 2007 की दांडिक अपील सं. 243 में खंड न्यायपीठ के निर्णय और आदेश और इसके साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अधीन 2007 की कारागार अपील सं. 313 जो 2006 की सेशन मामला सं. 2 में अपर सेशन न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक) सं. 1 द्वारा पारित किए गए तारीख 9 मार्च, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई थी में तारीख 11 जुलाई, 2007 को दिए गए खंड न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन मृत्यु दंड की पुष्टि के लिए विचार करने के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धाराओं 367 से 371 में अंतर्विष्ट उपबंधों के प्रति विशेष

संदर्भ में निर्देश की परीक्षा करने को आबद्ध है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 367 के अधीन जब निर्देश उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तब यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि आगे की जांच की जानी चाहिए या अतिरिक्त साक्ष्य लिया जाना चाहिए । दोषी व्यक्ति की दोषिता या निर्दोषिता पर प्रभाव डालने वाले किसी बिंदु के संबंध में यह ऐसी जांच कर सकता है या स्वतः ऐसा साक्ष्य ले सकता है या सेशन न्यायालय द्वारा ऐसा किए जाने या साक्ष्य लिए जाने का उसे निर्देश दे सकता है । ऐसी परिस्थितियों में अभियुक्त की उपस्थिति के संबंध में आनुषंगिक शक्तियां दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 367 के उपखंड (2) और (3) के अधीन उपबंधित की गई है । धारा 366 के अधीन निर्देश पर विचार करते हुए धारा 368 के अधीन यह अन्य बातों के अलावा दंडादेश की पुष्टि के लिए या विधि के अधीन को अन्य दंडादेश पारित करने या स्वतः दोषसिद्धि रद्द करने और इसके स्थान पर अभियुक्त को किसी अन्य अपराध के लिए दोषसिद्ध करने का उपबंध करती है जिसके लिए सेशन न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सकता था या उन्हीं तथ्यों पर नए विचारण के लिए आदेश कर सकता था या आरोप में संशोधन किए जाने के लिए आदेश कर सकता था । यह अभियुक्त को दोषमुक्त भी कर सकेगा । धारा 370 के अधीन जब ऐसा निर्देश न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा सुनवाई किया जाता है और यदि उनके बीच राय के संबंध में विभाजित है, तब मामला धारा 392 के अधीन उपबंधित रीति में विनिश्चय किया जाना चाहिए जिसके अनुसार मामला उक्त न्यायालय के एक अन्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाना चाहिए जो अपनी राय देगा और निर्णय या आदेश उक्त राय का अनुसरण करना चाहिए । यहां पुनः धारा 392 के परंतुक के अधीन, यह उल्लेख किया गया है कि यदि न्यायपीठ में सम्मिलित न्यायाधीशों में से एक न्यायाधीश या जहां अपील एक अन्य न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत की जाती है, उनमें से कोई भी, यदि ऐसा अपेक्षित हो, न्यायाधीशों की वृहत्तर न्यायपीठ द्वारा विनिश्चय किए जाने के लिए अपील की पुनः सुनवाई किए जाने का निदेश दे सकता है । (पैरा 15)

जब ऐसा विशेष और प्रमुख दायित्व दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर विचार करने वाले उच्च न्यायालय पर अधिरोपित किया गया है, तब हमें यह अवेक्षा करते हुए आघात पहुंचता है कि इसमें यहां आक्षेपित आदेश में, खंड न्यायपीठ ने मात्र इस प्रभाव का निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376/511 के अधीन अपराध के लिए अधिरोपित दंडादेश को बनाए रखने के लिए प्रार्थना करते हुए दंड संहिता,

1860 की धारा 302 के अधीन आने वाले अपराध के लिए मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में लघुकृत करने के लिए सहानुभूति दर्शाने के लिए अभिवाक् किया था और विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा कोई प्रतिवाद नहीं किया गया था । खंड न्यायपीठ ने एक मात्र उक्त आधार पर और मात्र यह कथन करते हुए कि अपीलार्थी के हाथों आहत पर घोर प्रकृति के बल का कोई प्रयोग नहीं किया गया था और हत्या के अपराध का किया जाना जघन्य या अमानवीय अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता और परिणामस्वरूप मृत्यु दंडादेश दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास में परिवर्तित किए जाने के लिए दायी था, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धाराओं 368 से 370 और 392 के साथ पठित धारा 366(1) के अधीन इसमें निहित अधिकारिता का उसकी भावना और परिप्रेक्ष्य में प्रयोग नहीं किया है और एतद्द्वारा हमारे मत में निर्देश का विनिश्चय करते समय उस रीति जिसमें कि इसे दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन इसका विनिश्चय करना चाहिए था, में विनिश्चय करने के अपने दायित्व को नहीं निभाया है । हम यह महसूस करते हैं कि आक्षेपित निर्णय पारित करते समय धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर विचार करते समय खंड न्यायपीठ द्वारा निर्णय उद्घोषित करते समय सरसरी रीति में कार्य किया गया था और इस संबंध में जितना कम कहा जाए उतना बेहतर है । (पैरा 16)

तथापि, हम यह कथन करने और यह अभिलिखित करने के लिए कर्तव्य आबद्ध हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन किए गए निर्देश में उच्च न्यायालय के लिए सिद्धदोष व्यक्ति की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा या राज्य के विद्वान् काउंसेल की ओर से की गई कोई रियायत पर अवलंब मात्र लेते हुए निर्देश की प्रक्रिया में छोटा मार्ग अपनाने का कोई प्रश्न नहीं उठता । उच्च न्यायालय पर वह रीति जिसमें अपराध कारित किया गया था की प्रकृति, दोषी की आपराधिक मनःस्थिति यदि कोई हो, विचारण न्यायालय द्वारा अवेक्षा की गई आहत की दुर्दशा (दुख) की वह रीति जिसमें कि अभिकथित रूप से अपराध कारित किया गया था, पीड़ित और इसी भांति संपूर्ण समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव, दोषी व्यक्ति के दोषीचित्त और लोक हित पर पड़ने वाले प्रभाव, अपराध के तुरंत पश्चात् दोषसिद्ध व्यक्ति का आचरण और तत्पश्चात् दोषी का पूर्व इतिहास, अपराध की घोरता और पीड़ित के आश्रितों या पीड़ित के संरक्षकों पर पड़ने वाले इसके प्रभाव की प्रकृति की जांच करने का कर्तव्य उच्च न्यायालय पर डाला गया है । निर्देश पर चर्चा करते समय उच्च

न्यायालय को अत्यंत व्यापक रूप से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि निर्देश का अंतिम परिणाम शांति प्रेमी नागरिकों के चित्त पर विश्वास उत्पन्न करे और अपराधों में लिप्त होने वाले अन्य व्यक्तियों के लिए भयोपरी के रूप में भी कार्य करने के उद्देश्य को हासिल करेगा । (पैरा 17)

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि राजस्थान उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने निर्देश पर ऐसे लापरवाहीपूर्ण रीति में निपटारा करते समय उपर्युक्त महत्वपूर्ण पहलुओं की अवेक्षा नहीं की । यह कथन किया जाना होगा कि यदि हमारे समक्ष अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा की गई दलीलों पर यदि गुणागुण के आधार पर विचार किया जाए, तब वे केवल विवाद्यक पर ऐसी रीति में विचार किया जाना अपेक्षित करेंगे जो कि सामान्य अनुक्रम में खंड न्यायपीठ द्वारा धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर चर्चा करते समय विचार और परीक्षा की जानी चाहिए थी । चूंकि उक्त प्रक्रिया निर्देश के साथ अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील पर चर्चा करते समय खंड न्यायपीठ द्वारा अपनाई जानी चाहिए थी, खंड न्यायपीठ को मामले को दुरुस्त करने के लिए उक्त प्रक्रिया जिसका पालन करना इस पर आबद्ध है को करने की मंजूरी दी जाती है । निर्देश के ऐसे मामलों में खंड न्यायपीठ पर डाले गए कर्तव्य पर बल देने के लिए हम यह दोहराते हैं कि प्रक्रिया के संबंध में ऐसा छोटा मार्ग अपनाया जाना संबंधित न्यायालय पर अत्यंत बुरा प्रभाव डालेगा । (पैरा 18)

हम यह मानते हैं कि यह खंड न्यायपीठ पर आबद्धकर कर्तव्य है कि वह ऊपर वर्णन की गई रीति में ऐसी प्रक्रिया का पालन करे और इसलिए हम उक्त कारण से इस अपील में आक्षेपित निर्णय को अपास्त करना उपयुक्त समझते हैं और मामले को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366 के अधीन मामले का उस रीति में विनिश्चय करने के लिए उच्च न्यायालय को वापस प्रति प्रेषित करते हैं जिस रीति में कि इसका विनिश्चय किया जाना चाहिए । चूंकि अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उस पर अधिरोपित दंडादेश विचारण न्यायालय की तारीख 9 मार्च, 2007 के निर्णय द्वारा किया गया था और अभिकथित अपराध तारीख 16 नवंबर, 2006 का था, मामले को वापस उच्च न्यायालय को प्रति प्रेषित करते हुए, हम उच्च न्यायालय को निर्देश के साथ, अपीलों का शीघ्र निपटारा करने का निदेश देते हैं और किसी भी दशा में यह उच्च न्यायालय को वापस अभिलेख भेजे जाने की प्राप्ति की तारीख से तीन माह के भीतर किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय के प्रति उपर्युक्त निर्देशों के साथ अपील का निपटारा किया गया । (पैरा 19)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 407.

राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर द्वारा 2007 की खंड न्यायपीठ दांडिक अपील सं. 243 में तारीख 11 जुलाई, 2007 को दिए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री आर. के. दास, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सूचित मोहंती, अंशुमान पटनायक और अनुपम लाल दास
प्रत्यर्थी की ओर से	सुश्री सोनिया माथुर और श्री मिलिन्द कुमार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति फकीर मोहम्मद इब्राहिम कलीफुल्ला ने दिया ।

न्या. कलीफुल्ला – एक मात्र अभियुक्त द्वारा फाइल की गई यह अपील राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अधीन दांडिक हत्या निर्देश और इसके साथ 2007 की दांडिक अपील सं. 1 और इसी भांति 2007 की दांडिक अपील सं. 243 में खंड न्यायपीठ के निर्णय और आदेश और इसके साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अधीन 2007 की कारागार अपील सं. 313 जो 2006 की सेशन मामला सं. 2 में अपर सेशन न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक) सं. 1 द्वारा पारित किए गए तारीख 9 मार्च, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई थी में तारीख 11 जुलाई, 2007 को दिए गए खंड न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । अपीलार्थी के विरुद्ध दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376 और 302 के अधीन आरोपों के लिए कार्रवाई की गई थी ।

2. अभियोजन के अनुसार तारीख 18 जनवरी, 2006 को लालतू मांझी द्वारा भारसाधक अधिकारी, पुलिस थाना, शास्त्री नगर, जोधपुर के समक्ष एक परिवाद (प्रदर्श पी-6) फाइल किया गया था जिसके अधीन यह अभिकथन किया गया था कि उसकी पुत्री भारती (मृतका) अपीलार्थी के घर में एक नौकरानी के रूप में नियोजित थी और परिवाद की तारीख से 25 दिन पूर्व सुदीप डे जिसकी मार्फत उसकी पुत्री अपीलार्थी के पास नियोजन में लगी थी, ने उसे फोन पर यह सूचित किया था कि उसकी पुत्री उससे बातचीत करना चाहती है, जब उसने अपनी पुत्री से बातचीत की तब उसे अपीलार्थी के घर में अपनी पुत्री के साथ की जा रही दुर्दशा

का ज्ञान हुआ । यद्यपि उसकी पुत्री अपीलार्थी के द्वारा किए जा रहे उसके साथ बुरे व्यवहार के संबंध में उसे स्पष्ट बताना चाहती थी, उसे विस्तार से उन्हें अपनी बात बताने से रोका गया था और तारीख 16 जनवरी, 2006 के प्रातःकाल लगभग 5.00 बजे उन्हें सुदीप डे से यह सूचना मिली कि अपीलार्थी ने उसे फोन पर यह सूचित किया था कि उनकी पुत्री चक्कर आने के कारण बेहोश हो गई थी और उसे अस्पताल में भर्ती किया गया है। इस सूचना पर जब मृतका का पिता जोधपुर पहुंचा तब अपीलार्थी ने सुदीप डे की मार्फत उन्हें ये सूचित किया गया था कि उनकी पुत्री मृत थी और उन्होंने तारीख 18 जनवरी, 2006 को एम. जी. अस्पताल के मुर्दाघर में अपने पुत्री के शव को देख सकते हैं जहां उन्होंने मृतका के पूरे शरीर पर क्षतियों की अवेक्षा की । उनके अनुसार जब उन्हें अपीलार्थी के पड़ोसियों के मार्फत सूचना मिली थी कि अपीलार्थी निरंतर रूप से पिछले दो माह के दौरान मृतका को यंत्रणा देता रहा है जिन दो माह के दौरान वह अपीलार्थी के घर में नियोजित थी और इसके अलावा उन्हें अपनी पुत्री के प्रति उसके अनैतिक आचरण के संबंध में भी उन पड़ोसियों से पता चला । इसके आगे यह भी कथन किया गया था कि उसकी पुत्री की अपीलार्थी द्वारा गला घोंटकर हत्या की गई थी ।

3. उपर्युक्त रिपोर्ट के आधार पर मामला, 2006 की अपराध सं. 31 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था और अन्वेषण के पश्चात् अंतिम रिपोर्ट फाइल की गई थी जिसके अनुसरण में अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 302 और 376 के अधीन अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए थे ।

4. विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन के समर्थन में प्रदर्श पी-1 से पी-2 के अलावा अभियोजन साक्षियों 1 से 17 की परीक्षा की गई थी । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन प्रश्न पूछे जाने पर अपीलार्थी ने उसके विरुद्ध अभिकथित अपराधों का खंडन किया । उसके अनुसार उसने मृतका से बलात्संग नहीं किया था, मृतका मिरगी की रोगी थी और घटना की तारीख को उसे मिरगी के दौरे आ रहे थे जिसके कारण उसे सांस लेने में कठिनाई हो रही थी और वह बेचैन हो गई थी और तत्पश्चात् जमीन पर गिर गई थी जिसके कारण उसे क्षतियां पहुंची थीं और उसे कृत्रिम श्वांस देने के लिए अपीलार्थी और उसकी पत्नी ने उनके दांत खोलने और उसमें पानी डालने के पश्चात् उसे एक तिपहिया टैक्सी में अस्पताल ले गया था जहां उसे मृत घोषित किया गया था । अपीलार्थी

द्वारा उसके आगे यह कथन किया गया था कि उसने मृतका के माता-पिता को सूचित किया था और परिवाद मिथ्या था और वह निर्दोष था ।

5. प्रारंभ में ही एक पहलू जो अवेक्षा किए जाने के लिए सुसंगत है वह यह है कि शवपरीक्षा रिपोर्ट के अनुसार मृतका के शरीर के सभी अंगों पर कुल मिलाकर 27 क्षतियां पहुंची थीं और विशेष रूप से क्षति सं. 19, 20 और 21 मृतका के गुप्तांगों पर पहुंची थीं । चिकित्सक अर्थात् अभि. सा. 9 जिसने शवपरीक्षा की थी, ने शवपरीक्षा रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया कि 'गले का विच्छेदन किए जाने पर - मृत्युपूर्व त्वचा के नीचे और मुलायम ऊतकों के नीचे गले के दाईं ओर लाल रंग के खून के थक्के विद्यमान थे । इसके आगे परीक्षा किए जाने पर श्वांस नली के ऊपरी भाग पर मुलायम नसों के दोनों ओर और उन पर कंठच्छद (स्वर यंत्रच्छद) के नीचे विषम मृत्युपूर्व गहरे लाल रंग के रक्त के थक्के विद्यमान थे । कंठिका अस्थि, टेटुआ और कार्टिकोड उपास्थियां सही पाई गई थीं, श्वांस नली का श्लेष्म भी ऊपरी आधे भाग में संकुचित था' ।

मत – मृत्यु का कारण, गले पर पहुंची मृत्युपूर्व क्षतियां हैं जो मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं ।

6. चिकित्सक की आगे की रिपोर्ट यह थी कि मृतका के कंठ (स्वरयंत्र) के ऊपर दबाव था । प्रदर्श पी-14 और पी-15 के अधीन आगे की रिपोर्टों में यह अवेक्षा की गई थी कि श्वांस प्रणाल के अनेक भाग कटे हुए थे और नसों में कसाव पाया गया था और इसके अतिरिक्त अनेक स्थानों पर रक्तस्राव और प्रदाह विद्यमान था । अभि. सा. 9 ने इसके आगे यह अवेक्षा की कि मृतका के श्वांस प्रणाल की तह पर दबाव था और क्षतियां कारित की गई थीं । अभि. सा. 9 चिकित्सक, जो गांधी अस्पताल, जोधपुर के अधीक्षक द्वारा गठित चिकित्सीय बोर्ड का सदस्य था, ने मृतका की शव की शवपरीक्षा की थी ।

7. अभि. सा. 9 ने अपने साक्ष्य में निम्न कथन किया :–

> "त्वचा और मुलायम ऊतकों के नीचे गले के बाईं ओर मृत्युपूर्व लाल रंग के रक्त के थक्के विद्यमान थे । आगे और परीक्षा किए जाने पर कठच्छद नीचे दोनों ओर विषम मृत्युपूर्व गहरे लाल रंग रक्त के थक्के विद्यमान थे जो वे श्वांस प्रणाल के ऊपरी भाग पर मुलायम नसों पर भी थे । टेटुआ, थायराइड और वलय ठीक पाए गए थे । स्वर यंत्रच्छद भी ऊपरी आधे भाग में संकुचित पाया गया था ।

शव की आंतरिक परीक्षा किए जाने पर यह पाया गया था कि बाएं सामने के क्षेत्र पर गहरे लाल रंग के 2 × 2 सें. मी. के क्षेत्र में सबस्कल्प रक्त के थक्के विद्यमान थे और नीचे की पंक्ति के निकट बाएं अनुकपाल अस्थि क्षेत्र 3 × 2 सें. मी. आकार के गहरे लाल थे । मस्तिष्क, दो फेफड़े, लिवर, तिल्ली और किडनी संकुचित पाए गए थे । उदर की झिल्ली पीली थी और उदर में लगभग 100 मिलिग्राम पीला द्रव्य अंतर्विष्ट था । यौन अंगों की परीक्षा किए जाने पर योनिच्छद में पुरानी ठीक हो गई फटन थी और योनि छिद्र में सुगमता से दो अंगुली प्रविष्ट हो सकती थीं । गर्भाशय आकार में छोटा, स्वस्थ और खाली पाया गया था ।'

8. विचारण न्यायालय ने चिकित्सीय साक्ष्य के आधार पर निम्न कथन किया :–

"यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि मृतका को पहुंची क्षति सं. 14 वक्ष के विपरीत मध्य भाग में और क्षति सं. 14 के ऊपर दाहिनी ओर पहुंची थी और 2 × 2 सें. मी. 4 × 2 सें. मी. के बीच अनेक खरोंचे वहां पर थीं जिनका उल्लेख किया गया है ।

मृतका के वक्ष के निचले भाग में बाएं चूचुक के ऊपर, बांए चूचुक के चारों ओर गोल आकार में वक्ष के किनारे के भाग पर दाहिनी ओर पेट पर एक तिहाई भाग में अनेक खरोंचों के रूप में मृतका को क्रमशः क्षति सं. 15, 19, 20, 21, 25 और 26 पहुंचाई गई थीं ।

उपर्युक्त सभी क्षतियां संभवतया मिरगी के दौरे में असहजता पाने के दौरान पहुंचान संभव नहीं हैं ।

* * * * *

अभि. सा. 9 डा. पी. सी. व्यास के साक्ष्य से यह स्पष्ट रीति में साबित होता है कि मृतका की मृत्यु का कारण वह क्षति थी जो उसके गले के आंतरिक भाग पर और बाह्य दबाव के परिणामस्वरूप उसे पहुंची थी । इसलिए यह स्पष्ट है कि मृतका की मृत्यु, गले पर कारित क्षति और गला घोंटे जाने के कारण हुई थी तथा उक्त क्षति मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी । अभि. सा. 9 डा. पी. सी. ब्यास के अनुसार गले के आंतरिक भागों के संदर्भ में उपर्युक्त कथन की पुष्टि हिस्टोपैथोलॉजी रिपोर्ट प्रदर्श पी-14 से भी होती है । आंतरिक स्वर नली में और श्वांस प्रणाल भाग पर खरोंचयुक्त घाव

पाए गए हैं ।

इसलिए अभि. सा. 9 डा. पी. सी. ब्यास के एकल साक्ष्य से यह तथ्य संदेह के परे साबित होता है कि मृतका कुमारी भारती की मृत्यु मिरगी के दौरे के परिणामस्वरूप सांस लेने में घुटन के कारण नहीं हुई थी । मृतका को मिरगी के दौरे के दौरान उपर्युक्त 27 क्षतियां, पहुंचने के संबंध में कोई संभावनाएं प्रकट नहीं हो सकी हैं ।"

9. विचारण न्यायालय ने साक्ष्य के विस्तृत विश्लेषण के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 302, 376/511 के अधीन आरोंपो का दोषी था । दंडादेश के प्रश्न पर अपीलार्थी और इसी भांति विद्वान् लोक अभियोजक की सुनवाई करने और मृत्यु दंड अधिरोपित करने के लिए लागू किए जाने वाले सिद्धांतों के संबंध में इस न्यायालय के विभिन्न विनिश्चय को निर्दिष्ट करने के पश्चात् अंततः निम्न अभिनिर्धारित किया गया था :–

"साक्ष्य से यह स्थिति स्पष्ट रूप से साबित होती है कि मृतका कुमारी भारती 14 वर्ष की आयु की अवयस्क लड़की थी और यह भी साक्ष्य से साबित होता है कि लड़की के पिता अभि. सा. 3 लालतू मांझी ने उसे पश्चिम बंगाल से जोधपुर में ब्यास कालोनी स्थित निवास पर घरेलू नौकरानी के रूप में अभियुक्त के घर पर कार्य करने के लिए भेजा था । मृतका का पिता लालतू मांझी अत्यंत ही निर्धन परिवार से संबंधित है और उसने अपनी वित्तीय परिस्थितियों के कारण अभियुक्त पर यह विश्वास करते हुए कि वह उसकी पुत्री को अपने स्वयं की पुत्री के रूप में रखेगा, अपनी पुत्री को पश्चिम बंगाल से राजस्थान में इतनी दूर भेजा था । घटना के समय अभियुक्त कुनाल मजूमदार वायु सेना स्टेशन जोधपुर में कार्य कर रहा था । अभियुक्त के संरक्षण में होने के कारण अभियुक्त ने संरक्षक होते हुए मृतका के साथ अत्यंत घोर अमानवीय कृत्य किया था और मृतका भारती के साथ बलात्संग करने के दौरान उसके शरीर के विभिन्न भागों पर कुल 27 क्षतियां कारित कीं और तत्पश्चात् उसका गला घोंटने के बाद उसकी हत्या कर दी । अभियुक्त ने मृतका के प्राइवेट शारीरिक अंगों पर अर्थात् दोनों स्तनों पर क्षतियां कारित कीं और इसके साथ ही मृतका के स्तनों के निकट भी अनेक शारीरिक क्षतियां कारित कीं । इस प्रकार से अभियुक्त ने अवयस्क लड़की जो कि स्वयं प्रतिरोध करने में असमर्थ थी, के साथ इस प्रकार का अनैतिक

कार्य कारित किया ।"

10. विचारण न्यायालय ने इसलिए दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन साबित पाए गए अपराध के लिए मृत्यु दंड अधिरोपित करने के अलावा पांच हजार रुपए का जुर्माना भी अधिरोपित किया और दंड संहिता की धारा 376/511 के अधीन अपराध के लिए सात वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश के साथ 25,000/- रुपए का जुर्माना अधिरोपित किया और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर उसे दो अतिरिक्त वर्षों का कारावास भोगना था । चूंकि मृत्यु दंड अधिरोपित किया गया था, इसलिए मामला दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय को निर्देश किया गया था और इसके निष्पादन के पूर्व उच्च न्यायालय की पुष्टि के लिए प्रतीक्षा किए जाने का आदेश किया गया था ।

11. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री आर. के. दास और राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल की सुनवाई की है । हमने अपीलार्थी की ओर से फाइल किए गए लिखित कथनों का भी परिशीलन किया है । इसमें यहां कथित कारणों से, हम अपीलार्थी की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की मामले के गुणागुणों पर प्रस्तुत की गई दलीलों पर विचार करने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं । विचारण न्यायालय के निर्णय का परिशीलन करने के पश्चात् जब हम उच्च न्यायालय के निर्णय की परीक्षा करते हैं, तब हमें यह अवेक्षा करते हुए आघात पहुंचता है कि मृत्यु दंड निर्देश की पुष्टि के लिए मामले पर राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा अत्यंत ही प्रायिक और अन्य मनस्क रीति में विचार किया गया था और मात्र यह कथन किया गया कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में लघुकृत करने के लिए सहानुभूतिपूर्वक विचार करने के लिए प्रार्थना की थी और राज्य के विद्वान् लोक अभियोजक से कोई प्रबल समर्थन न मिलने के कारण और मृतका को पहुंची क्षतियों के परिणामस्वरूप हुई मृत्यु, मृतका के साथ बर्बरता और अमानवीय रूप से बलात्संग और हत्या किए जाने के लिए किसी घोर बल के प्रयुक्त किए जाने को नहीं सुझाते थे और इसलिए दंड संहिता की धारा 370 सपठित धारा 511 के अधीन अपराधों के लिए अधिनिर्णीत दंडादेश को मान्य ठहराते हुए धारा 302 के अधीन मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में प्रवृत्त किया जा सकता है ।

12. उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय के विरुद्ध यह अपील फाइल करते हुए अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य दोषसिद्ध किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं है और परिणामस्वरूप अधिरोपित दंडादेश मान्य नहीं ठहराया जा सकता ।

13. हमने उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय की शुद्धता के संबंध में राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल को भी सुना है । क्रमिक काउंसेल खंड न्यायपीठ के निर्णय की शुद्धता या उसके अशुद्धता के संबंध में दलील प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं थे क्योंकि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन निर्देश में अधिरोपित दंडादेश जिस रीति में इस पर विचार किया जाना अपेक्षित था, उस रीति के अनुसार गुणागुणों और खामियों पर पूर्णतया कोई विचार नहीं किया गया था ।

14. यदि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलीलों पर विस्तार से विचार किया जाना था, तब इनको देखने पर ही यह उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष स्वयं अपीलार्थी के पक्षकथन के विरोध में थी, क्योंकि उच्च न्यायालय में यह अभिलिखित किया गया था कि विद्वान् काउंसेल, जिसने अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व किया, उसके द्वारा इस प्रभाव की केवल एक दलील दिए जाने का कथन किया गया है कि न्यायालय अपीलार्थी के मामले पर मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में परिवर्तित करने के लिए सहानुभूतिपूर्वक विचार करे और मुख्य अपराध के लिए आजीवन कारावास की प्रार्थना करते समय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376/511 के अधीन अपराध के लिए पारित किए गए दंडादेश को कोई गंभीर महत्व नहीं दिया था । यह मान भी लेते हुए कि अपीलार्थी की ओर से ऐसा कथन किया गया जैसा कि वह प्रथमदृष्ट्या हम यह समझने में असमर्थ हैं कि किस प्रकार विद्वान् लोक अभियोजक यह दलील दे सकते थे कि न्यायालय अपीलार्थी के मामले पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करे, जैसा कि खंड न्यायपीठ द्वारा इसमें यहां आक्षेपित निर्णय में अभिलिखित किया गया है ।

15. उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन मृत्यु दंड की पुष्टि के लिए विचार करने के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धाराओं 367 से 371 में अंतर्विष्ट उपबंधों के प्रति विशेष संदर्भ में निर्देश की परीक्षा करने को आबद्ध है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 367 के अधीन जब निर्देश उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तब यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि आगे की जांच की जानी चाहिए या अतिरिक्त साक्ष्य लिया जाना चाहिए । दोषी व्यक्ति की

दोषिता या निर्दोषिता पर प्रभाव डालने वाले किसी बिंदु के संबंध में यह ऐसी जांच कर सकता है या स्वतः ऐसा साक्ष्य ले सकता है या सेशन न्यायालय द्वारा ऐसा किए जाने या साक्ष्य लिए जाने का उसे निर्देश दे सकता है । ऐसी परिस्थितियों में अभियुक्त की उपस्थिति के संबंध में आनुषंगिक शक्तियां दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 367 के उपखंड (2) और (3) के अधीन उपबंधित की गई हैं । धारा 366 के अधीन निर्देश पर विचार करते हुए धारा 368 के अधीन यह अन्य बातों के अलावा दंडादेश की पुष्टि के लिए या विधि के अधीन को अन्य दंडादेश पारित करने या स्वतः दोषसिद्धि रद्द करने और इसके स्थान पर अभियुक्त को किसी अन्य अपराध के लिए दोषसिद्ध करने का उपबंध करती है जिसके लिए सेशन न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सकता था या उन्हीं तथ्यों पर नए विचारण के लिए आदेश कर सकता था या आरोप में संशोधन किए जाने के लिए आदेश कर सकता था । यह अभियुक्त को दोषमुक्त भी कर सकेगा । धारा 370 के अधीन जब ऐसा निर्देश न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा सुनवाई किया जाता है और यदि उनके बीच राय के संबंध में विभाजित है, तब मामला धारा 392 के अधीन उपबंधित रीति में विनिश्चय किया जाना चाहिए जिसके अनुसार मामला उक्त न्यायालय के एक अन्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाना चाहिए जो अपनी राय देगा और निर्णय या आदेश उक्त राय का अनुसरण करना चाहिए । यहां पुनः धारा 392 के परंतुक के अधीन, यह उल्लेख किया गया है कि यदि न्यायपीठ में सम्मिलित न्यायाधीशों में से एक न्यायाधीश या जहां अपील एक अन्य न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत की जाती है, उनमें से कोई भी, यदि ऐसा अपेक्षित हो, न्यायाधीशों की वृहत्तर न्यायपीठ द्वारा विनिश्चय किए जाने के लिए अपील की पुनः सुनवाई किए जाने का निदेश दे सकता है ।

16. जब ऐसा विशेष और प्रमुख दायित्व दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर विचार करने वाले उच्च न्यायालय पर अधिरोपित किया गया है, तब हमें यह अवेक्षा करते हुए आघात पहुंचता है कि इसमें यहां आक्षेपित आदेश में, खंड न्यायपीठ ने मात्र इस प्रभाव का निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने दंड संहिता, 1860 की धाराओं 376/511 के अधीन अपराध के लिए अधिरोपित दंडादेश को बनाए रखने के लिए प्रार्थना करते हुए दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन आने वाले अपराध के लिए मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में लघुकृत करने के लिए सहानुभूति दर्शाने के लिए अभिवाक् किया था और विद्वान् लोक अभियोजक द्वारा कोई प्रतिवाद नहीं किया गया था । खंड न्यायपीठ ने एक मात्र उक्त आधार पर और मात्र यह

कथन करते हुए कि अपीलार्थी के हाथों आहत पर घोर प्रकृति के बल का कोई प्रयोग नहीं किया गया था और हत्या के अपराध का किया जाना जघन्य या अमानवीय अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता और परिणामस्वरूप मृत्यु दंडादेश दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास में परिवर्तित किए जाने के लिए दायी था, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धाराओं 368 से 370 और 392 के साथ पठित धारा 366(1) के अधीन इसमें निहित अधिकारिता का उसकी भावना और परिप्रेक्ष्य में प्रयोग नहीं किया है और एतद्द्वारा हमारे मत में निर्देश का विनिश्चय करते समय उस रीति जिसमें कि इसे दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन इसका विनिश्चय करना चाहिए था, में विनिश्चय करने के अपने दायित्व को नहीं निभाया है । हम यह महसूस करते हैं कि आक्षेपित निर्णय पारित करते समय धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर विचार करते समय खंड न्यायपीठ द्वारा निर्णय उद्घोषित करते समय सरसरी रीति में कार्य किया गया था और इस संबंध में जितना कम कहा जाए उतना बेहतर है ।

17. तथापि, हम यह कथन करने और यह अभिलिखित करने के लिए कर्तव्य आबद्ध हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366(1) के अधीन किए गए निर्देश में उच्च न्यायालय के लिए सिद्धदोष व्यक्ति की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा या राज्य के विद्वान् काउंसेल की ओर से की गई कोई रियायत पर अवलंब मात्र लेते हुए निर्देश की प्रक्रिया में छोटा मार्ग अपनाने का कोई प्रश्न नहीं उठता । उच्च न्यायालय पर वह रीति जिसमें अपराध कारित किया गया था की प्रकृति, दोषी की आपराधिक मनःस्थिति यदि कोई हो, विचारण न्यायालय द्वारा अवेक्षा की गई आहत की दुर्दशा (दुख) की वह रीति जिसमें कि अभिकथित रूप से अपराध कारित किया गया था, पीड़ित और इसी भांति संपूर्ण समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव, दोषी व्यक्ति के दोषीचित्त और लोकहित पर पड़ने वाले प्रभाव, अपराध के तुरंत पश्चात् दोषसिद्ध व्यक्ति का आचरण और तत्पश्चात् दोषी का पूर्व इतिहास, अपराध की घोरता और पीड़ित के आश्रितों या पीड़ित के संरक्षकों पर पड़ने वाले इसके प्रभाव की प्रकृति की जांच करने का कर्तव्य उच्च न्यायालय पर डाला गया है । निर्देश पर चर्चा करते समय उच्च न्यायालय को अत्यंत व्यापक रूप से यह सुनिश्चित करना चाहिए कि निर्देश का अंतिम परिणाम शांति प्रेमी नागरिकों के चित्त पर विश्वास उत्पन्न करे और अपराधों में लिप्त होने वाले अन्य व्यक्तियों के लिए भयोपरी के रूप में भी कार्य करने के उद्देश्य को हासिल करेगा ।

18. यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि राजस्थान उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने निर्देश पर ऐसे लापरवाहीपूर्ण रीति में निपटारा करते समय उपर्युक्त महत्वपूर्ण पहलुओं की अवेक्षा नहीं की । यह कथन किया जाना होगा कि यदि हमारे समक्ष अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा की गई दलीलों पर यदि गुणागुण के आधार पर विचार किया जाए, तब वे केवल विवाद्यक पर ऐसी रीति में विचार किया जाना अपेक्षित करेंगे जो कि सामान्य अनुक्रम में खंड न्यायपीठ द्वारा धारा 366(1) के अधीन निर्देश पर चर्चा करते समय विचार और परीक्षा की जानी चाहिए थी । चूंकि उक्त प्रक्रिया निर्देश के साथ अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील पर चर्चा करते समय खंड न्यायपीठ द्वारा अपनाई जानी चाहिए थी, खंड न्यायपीठ को मामले को दुरुस्त करने के लिए उक्त प्रक्रिया जिसका पालन करना इस पर आबद्ध है को करने की मंजूरी दी जाती है । निर्देश के ऐसे मामलों में खंड न्यायपीठ पर डाले गए कर्तव्य पर बल देने के लिए हम यह दोहराते हैं कि प्रक्रिया के संबंध में ऐसा छोटा मार्ग अपनाया जाना संबंधित न्यायालय पर अत्यंत बुरा प्रभाव डालेगा ।

19. हम यह मानते हैं कि यह खंड न्यायपीठ पर आबद्धकर कर्तव्य है कि वह ऊपर वर्णन की गई रीति में ऐसी प्रक्रिया का पालन करे और इसलिए हम उक्त कारण से इस अपील में आक्षेपित निर्णय को अपास्त करना उपयुक्त समझते हैं और मामले को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 366 के अधीन मामले का उस रीति में विनिश्चय करने के लिए उच्च न्यायालय को वापस प्रति प्रेषित करते हैं जिस रीति में कि इसका विनिश्चय किया जाना चाहिए । चूंकि अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उस पर अधिरोपित दंडादेश विचारण न्यायालय की तारीख 9 मार्च, 2007 के निर्णय द्वारा किया गया था और अभिकथित अपराध तारीख 16 नवंबर, 2006 का था, मामले को वापस उच्च न्यायालय को प्रति प्रेषित करते हुए, हम उच्च न्यायालय को निर्देश के साथ, अपीलों का शीघ्र निपटारा करने का निदेश देते हैं और किसी भी दशा में यह उच्च न्यायालय को वापस अभिलेख भेजे जाने की प्राप्ति की तारीख से तीन माह के भीतर किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय के प्रति उपर्युक्त निर्देशों के साथ अपील का निपटारा किया गया ।

अपील खारिज की गई ।

अनू.